International Journal of Applied Research 2016; 2(1): 481-483

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 481-483
www.allresearchjournal.com
Received: 01-11-2015
Accepted: 03-12-2015

डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय ढलियारा कांगडा हि.प्र.

Correspondence
डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय ढलियारा कांगडा हि.प्र.

सिद्ध और नाथ साधना पद्धति का तुलनत्मक अध्ययन

डॉ. शिवदत्त शर्मा

सिद्धों का अस्तित्व आठवीं सदी में भारतीय साधना के इतिहास में मिलता है। यह तो स्पष्ट है कि बौद्धधर्म से सिद्धों का विकास हुआ। इतिहास साक्षी है कि जब बौद्ध धर्म में विकार उत्पन्न हो गए तो प्रतिकिया वश सिद्ध अस्तित्व में आए। बौद्ध धर्म के प्रवर्तक महात्मा बुद्ध का निर्वाण 483 ई में हुआ। उसके बाद लगभग आधी शताब्दी तक बौद्ध धर्म का बहुत अधिक प्रचार प्रसार हुआ। इस सिद्धान्त की विशेषता परस्पर सहानुभूति एवं सदाचार मुख्य है। कालान्तर में बौद्ध धर्म हीनयान और महायान दो शाखाओं में बंट गया। हीनयान में सिद्धान्त पक्ष पर बल दिया गया है और महायान में व्यावहारिक पक्ष की प्रधानता है। महायानी शाखा वाले ये मानते थे कि छोटे बडे उच्चनीच, गृहस्थी सन्यासी, सभी को इस शाखा में अनुसरण करते हुए निर्वाण प्राप्त हो सकता है, जबकि हीनयान केवल विरक्तों तथा सन्यासियों को ही आश्रय प्रदान करते थे। कालान्तर में गुप्त काल में बौद्ध धर्म को काफी हानि उठानी पडी। नाथ सम्प्रदाय भी लगभग इसी काल में अस्तित्व में आया। 1 दोनो मुख्य सम्प्रदायों के इतिहास, दर्शन एवं परवर्ती प्रभाव का अवलोकन इस शोध पत्र में प्रेत्य है। निम्न लिखित अनुषंगों के आधार पर इस विषय पर सविस्तार चर्चा अपेक्षित है।

सिद्ध सम्प्रदाय का परिचय

यह तो स्पष्ट है कि सिद्ध सम्प्रदाय का अस्तित्व आठवीं शताब्दी में इतिहास में निबद्ध है। बौद्ध धर्म से विकसित सिद्ध सम्प्रदाय का हिन्दी साहित्य में अनेक दृष्टियों से बडा महत्व है। आठवीं शताब्दी में कुमारिलभट्ट तथा शंकराचार्य ने बुद्ध धर्म को एक तरह से निर्वासित ही कर दिया, और यह धर्म तिब्बत, नेपाल, बंगाल आदि में फैलने लगा। बौद्ध धर्म पर धीरे धीरे शैव धर्म का प्रभाव पडने लगा। इस धर्म ने जनसाधारण को अपनी ओर आकर्षित करना प्रारम्भ कर दिया था। बौद्धों ने आकर्षण के लिए तंत्र–मंत्र का सहारा लिया और इसे इसमें शामिल कर लिया।आगे चलकर महायान मंत्रयान कहलाया।इसकी भी दो शाखाएं हो गईं।वज्रयान और सहजयान।वज्रयान आगे चलकर सिद्ध कहलाए। सिद्धों ने बौद्धधर्म के सरल मार्ग को छोड कर योगमार्ग को अपना लिया और वामाचार को अपने अन्दर सम्मिलित कर लिया। 2

सिद्धों की संख्या 84 मानी गई है। राहुल सांकृत्यायन ने सिद्ध कवि सरहपा को हिन्दी का प्रथम कवि माना है, जबकि अनेक आलोचक ऐसा नहीं स्वीकार करते। सरहपा का समय सम्बत् 797 से 1257 तक माना गया है। सरहपा, कपहपा, शबरपा, लुइपा, डोम्मीपा, कुक्करीपा, आदि सिद्ध कवि के रूप में भी जाने जाते हैं। डॉ शिवकुमार शर्मा के अनुसार सिद्ध प्रायः हीन जाति के लोग थे और उनकी साधना नायिकाएं भी छोटी जाति की होतीं थी। इनका साहित्य संध्या भाषा में है। सिद्ध धर्म के नाम पर कामवासना में लिप्त रहते थे, परन्तु कुछ विद्वानों ने सिद्धों के साहित्य को चार भागों विभक्त किया है और इसे आध्यात्मिक साहित्य कहा है। इसे चार भागों में इस प्रकार विभाजित किया गया है–

क आचारपरक साहित्य
ख नीतिपरक साहित्य
ग उपदेशात्मक साहित्य
घ साधनात्मक साहित्यकार

नाथ सम्प्रदाय

हिन्दी शब्दकोष के अनुसार नाथ शब्द का अर्थ है स्वामी या पति। इसके अतिरिक्त इस शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया जाता है।महात्मा बुद्ध के लिए भी इस नाथ शब्द का प्रयोग किया गया है।शैवों ने तो भगवान शिव के लिए इस शब्द का प्रयोग किया ही है। डॉ हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि आदि नाथ स्वयं शिव ही हैं। इससे यहतो स्पष्ट हो जाता है कि नाथ सम्प्रदाय के लोग शैव मतावलम्बी थे।उनका उपास्य देव शिव ही थे। शिव के बाद मत्स्येन्द्र का नाम आता है। जिस प्रकार सिद्धों की संख्या 84 मानी जाती है वैसे ही नाथों की संख्या 9 मानी जाती है।अनेक

आलोचकों का मानना है कि जब वज्रयानी सिद्ध वामाचार में अधिक संलिप्त रहने लगे तब उनकी प्रतिक्रिया के स्वरूप नाथ सम्प्रदाय अस्तित्व में आया। यह भी सत्य है कि सिद्ध मत और नाथ मत दोनों आपस में संबन्धित हैं तथा दोनों ने योग साधन को अपनी साधना में स्थान दिया। इस तरह यह भी स्पष्ट है कि सिद्ध और नाथ साहित्य की उपासना तथा सामाजिक सोद्देश्यता दोनों प्रायः एक समान हैं।परन्तु दोनों को एक ही मान लेना अनुचित होगा।3

डॉ हजारी प्रसाद ने अपने विचार व्यक्त करते हुए इस संदर्भ में लिखा है कि– नाथ पंथ या नाथ सम्प्रदाय के सिद्धमत, सिद्ध मार्ग, योगमार्ग, योग, योगसम्प्रदाय, अवधूतमत एवं अवधूत सम्प्रदाय नाम भी प्रसिद्ध हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि दोनों एक ही हैं।वस्तुतः जब सिद्ध मत विकारों से भर गया और वे मद्य, मांस, मैथुन, को अधिक महत्व देने लगे तो स्वाभाविक है कि उसकी प्रतिक्रिया होनी निश्चित थी। अतः उस प्रतिक्रिया में नाथ मत का उद्भव हुआ।

नाथों में गुरु गोरखनाथ सर्वाधिक प्रतिष्ठित साधक एवं कवि हैं। ऐंसा माना जाता है कि इनकी रचनाओं की संख्या 40 के आसपास थी। इन रचित ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है–

अवधूत गीता, गोरक्षगीता, गोरक्षशास्त्र, ज्ञानप्रकाशशतक, नाडीज्ञान प्रदीपिका, योगचिन्तामणि, योगशास्त्र, सिद्ध सिद्धान्त पद्धति, हठयोग, और हठसंहिता आदि हैं।

कुल नव नाथों में केवल मत्स्येन्द्र नाथ, जालन्धर नाथ, गोरखनाथ, चौरंगीनथ, कणेरी नाथ,चरपटीनाथ, भर्तृहरिनाथ, कन्थडीनाथ और गहनीनाथ आदि के नाम गिनाए जा सकते हैं। हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान एवं इतिहासकार डॉ. पीताम्बर दत्त बडथ्वाल के स्तुत्य प्रयास से नाथों की रचनाओं का सम्पादन 1942 ई में हुआ था। गुरु गोरखनाथ ही नाथ सम्प्रदाय के सर्वाधिक महत्वपूर्ण और समर्थ विद्वान माने जा सकते है।4

डॉ रामकुमार वर्मा ने गोरखनाथ के विषय में ठीक ही लिखा है–गोरखनाथ ने नाथ सम्प्रदाय को जिस आन्दोलन का रूप दिया, वह भारतीय मनोवृत्ति के सर्वथा अनुकूल सिद्ध हुआ है। उसमें जहां एक ओर ईश्वरवाद की निश्चित धारणा उपस्थित की गई है, वहां दूसरी ओर विकृत करने वाली समस्त परम्परागत रूढियों पर की भी आघात किया गया है। जीवन को अधिक से अधिक संयम और सदाचार के अनुशासन में रखकर आध्यात्मिक अनुभूतियों के लिए सहज मार्ग की व्यवस्था करने का शक्तिशाली प्रयोग गोरखनाथ ने किया।5

4 सिद्धों और नाथों का साधना पक्ष–

सिद्धों ने एक ओर जहां पाखण्ड, मूर्तिपूजा, जातिपाति, वेद, बाह्याचार, आदि का विरोध किया है। वहीं दूसरी ओर वे मनुष्य को अन्तर्मुखी–साधना अपनाने का संदेश दिया है। अन्तर्मुखी साधना के लिए शरीर की शुद्धि आवश्यक है।उनके अनुसार मनुष्य के शरीर में जो सहस्त्रार व कुण्डलिनी है वही वास्तव में शिव और शक्ति हैं। उदाहरण के लिए विरुपा की वारुणी प्रेरित अन्तर्मुखी साधना की पद्धति को देखिए–

सहजे थिर करि वारुणी साथ।
अजशमर होई दिर कांध।
दशमि दुआरत चिह्न देखइआ।
आइल गराहक अपने बिहआ।
चउशठि घडिए देर पसारा।
पइठल गराहक नहि निसारा।

यह तो स्पष्ट है कि सिद्ध साहित्य में मद्य–मैथुन के उपयोग की बात की गई है। तांत्रिक साधना के अन्तिम चरणों में तो महासुखवाद ने सहवास सुख का रूप धारण कर लिया था। इसे एक तरह से साधना के लिए अनिवार्य घोषित कर दिया था। सिद्धि की प्राप्ति के लिए किसी योगिनी का सहचर्य अनिवार्य हो गया थां । इन तांत्रिक सिद्धों की साधनाओं में डोमिनी, रजकी, महामुद्रा आदि के नाम विशेष रूप से गिने जा सकते हैं। ये उंच–नीच वर्ण की स्त्रियों के साथ व्यभिचार करते थे। 6 उदाहरण के लिए सिद्ध कण्हपा अपनी कुण्डलिनी को जागृत करने के लिए डोमिनी का आह्वान करते हैं–

नगर बाहिर डोबी तोहरि कुडिया छइ।
छोइ जाद सो बान्ह बडिया।
आलो डोबि!तोए सम करिब न सांग।
निधिण कण्कपाली जोइ लाग।

सिद्ध कवियों ने ईश्वर को प्राप्त करने के लिए गुरु का महत्व प्रतिपादित किया है। 7 उनके अनुसार साधक गुरु का उपदेश पाकर ही माया के बन्धन से छूट सकता हैं। सद्गुरु के बिना कोई भी व्यक्ति योगसाधना में सफल नहीं हो सकता इस लिए गुरु का महत्व सर्वाधिक है आगे चलकर सन्तों पर इनका प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता हैं। डोमिपा नामक कवि ने गुरु की महत्ता को स्वीकार करते हुए लिखा है–

गंगा जउना माझेर बहर नाइ।
तांहि बुडिली मातंगि पोइआली ले पार करई।
बाहुत डांम्बी बाह लो डोम्बी बाटत भइल उधार।
सद्गुरु पाउ ए जाइब पुणु जिणउरा।

सिद्धों ने नारी के उपभोग की बात तो की है परन्तु अन्यत्र उन्होने इन्द्रिय निग्रह को आवश्यक माना है। इसके अतिरिक्त सिद्धों ने शून्यवाद में अपनी आस्था व्यक्त की है।8 इन्होंने चार प्रकार के शून्य का वर्णन किया है। कुछ सिद्ध कवि शरीर तथा चित्त की वृत्तियों को शान्त करने का उपदेश देते हैं।आरम्भ में सिद्धों ने सहज और स्वाभाविक जीवन–यापन को विशेष महत्व दिया था। उनका कहना था कि जो लोग सीधे मार्ग पर चलते हैं वही लोग ईश्वर को पा सकते हैं।सहज मार्ग ग्रहण करने से संसार का मोह नष्ट हो जाता है। एक सिद्ध कवि के वचन देखिए–

हरिणी बोताइ हरिणा सुनतो, एव व छाडी होहुभान्तो।
भवतरंगे हरिणार खुन न दीस, भूसुक भण्इ मूठ हियाहिंणपहसहं।

सिद्धों के समान ही नाथों का साधना पक्ष प्रबल है। नाथ पंथी संसार के भोगविलास को त्याग कर निवृत होने पर बल देते हैं।नाथों के अनुसार मनुष्य का मन तथा इन्द्रियां संसार के भोग विलास में लिप्त हो जाने के कारण उन्हे मुक्ति नहीं मिलती। संसार से मुक्ति के लिए वैराग्य ही एक मात्र साधन हे। उनके अनुसार वैंराग्य से प्राणायाम में एकाग्रता आती है और साधक बिना किसी रूकावट से साधना में लीन हो जाता है।9 इसी लिए नाथ पेथियों ने निवृत्ति मूलक मार्ग को अपनाने का उपदेश दिया है–

भोगिष सूते अनहूं न जागे भोग नहिं रे रोग अभागे
बंदत गोरख नाथ आतमां विचारत ज्यूंल ज दीसै चंदा।

सिद्धों ने नारी को योगिनी अथवा महा मुद्रा कहकर योग और भोग में स्वीकार किया था, वहीं दूसरी ओर नाथों ने नारी को माया का रूप कह कर उसका तिरस्कार किया है, खास बात यह है कि नारी का जिस प्रकार साधना का पुट देकर सिद्धों ने दुरुपयोग किया वैसा नाथ पंथियों ने नहीं किया। 10 नाथों ने नारी को कामिनी कहकर साधक को उससे बचने का उपदेश दिया।योगी की साधना में योग नारी बाधक बताई गई है। नाथ योगियों ने

ब्रह्मचर्य, संयम, इन्द्रिय निग्रह, आदि पर विशेष बलदिया हैं गोरख नाथ नारी की करते हुए कहते हैं–

दिवसै बाघिणी मन मौहैं,रात सरोवर सोषै।
जानि बुझि रे मुरषि लोगै घरि बाघिणी पोषै।।

नाथ पंथियों ने भी अपनी रचनाओं में गुरु के महत्व को प्रतिपादित किया है।उनके अनुसार ज्ञान की प्राप्ति के लिए गुरु ही पथप्रदर्शक है। वे किसी ढोंगी, पाखण्डी, गुरु के विरुद्ध हैं। उनके मत के अनुसार गुरु सही अर्थों में गुरु होना चाहिए जो शिष्य को अज्ञान के अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाए। गुरु गोरख नाथ ने तो गुरु के अभाव में प्राप्त ज्ञान को भी अधूरा माना है–

गुरु कीजै गहिला, निगुरा न रहिला।
गुरु बिन ग्यान न, पाईला रे भाईला।11

इस तरह गुरु के महत्व को सन्तों ने भी उसी प्रकार स्वीकार किया है इस तरह नाथों एवं सिद्धों का प्रभाव स्पष्टरू॰ से सन्तसाहित्य पर दिखाई देता है।

सिद्धों और नाथों का सामाजिक उद्देश्य

सिद्धों ने साधना पक्ष पर बल दिया तथा उन्होंने तत्कालीन समाज में प्रचलित पाखण्ड, रूढियों तथा बाह्याचारों का विरोध भी किया। डॉ रामकुमार वर्मा ने साफ लिखा है– निराशवाद के भीतर से आशावा का संदेश देना, संसार की क्षणभंगुरता, उसके वैचित्र्य का इन्द्र धनुषी चित्र खींचना इन सिद्धों की कविता का गुण था और उनका आदर्श था– जीवन की भयानक वरस्तविकता की अग्नि से निकलकर मनुष्य को महासुख के शीतल सरोवर में अवगाहन कराना। 12 इस सन्दर्भ में सरह पाद की निम्न पंक्तियां देखिए जिनमें वे पण्डितों के शास्त्र ज्ञान का विरोध करते हैं–

पंडिअ सअल सतु बक्खाणइ,
दे हहि रूद्ध बसंत न जाणइ।
अमणागमण ठातेन दिखडिअ,
तोवि णिज्जइ भणइ हउ पंडिअ।

सिद्धों ने ब्रह्म, ईश्वर, जातिपाति, वेद, यज्ञ, आदि का खण्डन किया है, इन्हे पाखण्ड माना है। सिद्ध वास्तव में समाज से जुडे हुए थे तथा निम्न जाति के लोग सरलता से इन्हें मिल सकते थे। वर्ण व्यवस्था में इनका विश्वास नहीं था। सरहपा ने एक छन्द में ब्राह्मणों का मजाक उडाया हैं। उनका कथन देखिए–
सुना है ब्राह्मण ब्रह्मा के मुखसे पैदा हुए।जब हुए होंगे, तब हुए होगे। अब तो वे भी वैसे ही पैदा होते हैं, जैसे दूसरे सब। इसी प्रकार नाथों ने भी बाह्य आडम्बरों का डट कर विरोध किया है। नाथों का एक छन्दमें उनके विचार निबद्ध हैं–

पंथि चलै चलि पवना तूरै, नाद बिंदु अरुझाई।
घर ही भीतरि अठसठ तीरथ, कहां भ्रमै रे भाई।

नाथों ने वेद, कुरान, मन्दिर आदि का भी विरोध सिद्धों की ही तरह किया है जिसका प्रभाव सम्पूर्ण सन्त साहित्य पर पडा है। सदाचार, नैतिकता, सहज जीवन, नाथ पंथियों के दर्शन का अंग था जिसका प्रभाव सन्त वाणी में देखा जा सकता है। सिद्धों ने जहां मांस मदिरा मैथुन की वकालत की थी, नाथों ने इस के विपरीत अन्य बुराईयों सहित इनका भी विरोध डट कर किया तथा पवित्र जीवन जीने का उपदेश दिया। ब्रह्मचर्य की रक्षा, सुखदुख समभाव, सदाचार, नैतिकता को अपने जीवन दर्शन का अनिवार्य अंग घोषित किया। गोरखनाथ के विचार नेतिकता पर देखने योग्य है–

हबकि न बोलिषाठबकि न चलिषा धीरे धीरे धरिबा पांब।
गरब न करिबा, सहज रहिबा, भणत गोरख रांव।।

इस प्रकार सारांशतः कहा जा सकता है कि सिद्धों और नाथों के दर्शन का प्रभाव दूरगामी अवश्य हुआ। आगे चलकर सन्तों की वाणी पूरी तरह इन से प्रभावित हुई। इसके अतिरिक्त साहित्य, भाषा, और जीवन दर्शन, को भी प्रभावित किया। अनेक अच्छाईयां आगे बढीं तथा अनेक विकार जीवन से तिरोहित हो गए। आज सन्त साहित्य का जो स्वरूप हमारे सामने है, उसका मूल सिद्ध एवं नाथ सम्प्रदाय में निहित है। भाषा के आधुनिक स्वरूप का मूल भी इसी साहित्य में है।

सन्दर्भ सूचि

1. डॉ नगेन्द्र हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ 87
2. डॉ रामकुमार हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ 34
3. डॉ गणपति चन्द्र गुप्त हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास पृ56
4. डॉ नगेन्द्र इतिहास सम्पादन पृ 98
5. डॉ रामकुमार हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ120
6. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य की भूमिका पृ 123
7. उपरोक्त पृ 34
8. उपरोक्त पृ 76
9. डॉ नगेन्द्र इतिहांस सम्पादन पृ 86
10. उपरोक्त पृ90
11. डॉ भोला नाथ तिवारी हिन्दी साहित्य पृ4
12. गुरु गोरख नाथ गोरखवाणी पृ 34
13. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य की भूमिका पृ62